रुदुल साह

बनाम

बिहार राज्य और एक अन्य

(Rudul Sah

v.

State of Bihar and Another)

(1 अगस्त, 1983)

(मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़, न्यायाधिपति अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र)

संविधान, 1950—अनुच्छेद 21 और 32—उच्चतम न्यायालय की रिट अधिकारिता—बन्दी-प्रत्यक्षीकरण—विचारण न्यायालय द्वारा पिटीशनर को दोषमुक्त कर दिया जाना किन्तु उसे कारागार में अवैध रूप से निरुद्ध रखा जाना—उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह अभियुक्त के सम्बन्ध में रिहाई और प्रतिकर की बाबत आदेश पारित कर सके।

वर्तमान मामले में पिटीशनर को उसके विचारण के दौरान दोषमुक्त किए जाने के पश्चात् भी 14 वर्ष से अधिक समय के लिए अवैध रूप से कारागार में निरुद्ध रखा गया। अभियुक्त ने उच्चतम न्यायालय में पूर्वोक्त अवैध निरोध से अपनी रिहाई के लिए बन्दी-प्रत्यक्षीकरण का पिटीशन दायर किया। उसे उक्त अनुतोष प्रदान कर दिया गया क्योंकि विचारण न्यायालय द्वारा ही यह स्वीकार कर लिया गया था कि चूंकि वह दोषमुक्त किए जाने का हकदार है इसलिए कारागार में उसे निरुद्ध रखा जाना अवैध है। इसके अतिरिक्त, उसने यह दलील दी कि वह अवैध अवरोध के संबंध में प्रतिकर प्राप्त करने का हकदार है और उच्चतम न्यायालय को चाहिए कि वह स्वयं बन्दी-प्रत्यक्षीकरण पिटीशन में प्रतिकर के संदाय के लिए समुचित आदेश पारित कर दे। बिहार राज्य द्वारा पिटीशनर को जो नुकसान उठाना पड़ा था, उसे उच्चतम न्यायालय द्वारा स्वीकार करते हुए और प्रतिकर प्रदान करते हुए, और रिट पिटीशन मंजूर करते हुए,

1983(8) eILR(PAT) SC 1

अभिनिर्धारित—विचारार्थ मुख्य प्रश्न यह है कि क्या संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन निचले न्यायालय की अधिकारिता के प्रयोग में यह न्यायालय ऐसी दशा में धन के संदाय के लिए आदेश पारित कर सकता है जिसमें कि ऐसा आदेश किसी मूल अधिकार के प्रवंचन के परिणामस्वरूप प्रतिकर की प्रकृति में हो। प्रस्तुत मामला ऐसे मामलों का एक दृष्टांत स्वरूप है। यहां पिटीशनर को, अवैध रूप से पूर्ण विचारण में उसकी दोषमुक्ति के पश्चात् 14 वर्ष का समय बीत जाने के बाद भी कारागार में निरुद्ध रखा गया था। उसने इस न्यायालय में अवैध निरोध से अपनी रिहाई के लिए बन्दी प्रत्यक्षीकरण पिटीशन फाइल किया। उसे वह अनुतोष अभिप्राप्त हो गया क्योंकि इस न्यायालय का यह निष्कर्ष था कि उसकी दोषमुक्ति के पश्चात् कारागार में उसका निरोध सर्वथा अन्यायोचित था। उसने यह दलील दी है कि वह अपने अवैध निरोध के लिए प्रतिकर प्राप्त करने का हक़दार है और इस न्यायालय को चाहिए कि वह स्वयं इस बन्दी प्रत्यक्षीकरण पिटीशन में प्रतिकर के संदाय के लिए समुचित आदेश पारित करे। (पैरा 9)

अनुच्छेद 21, जो कि प्राण और स्वतंत्रता के अधिकार की गारण्टी प्रदान करता है, ऐसी दशा में अपनी महत्वपूर्ण अन्तर्विष्टि से विहीन हो जाएगा जिसमें कि इस न्यायालय की शक्ति अवैध निरोध से रिहाई के आदेश पारित करने मात्र तक सीमित हो। उन प्रभावशील उपायों में से जिनमें कि उस अधिकार के उल्लंघन को युक्तियुक्त रूप से और अनुच्छेद 21 के समादेश के सम्यक् पालन को निवारित किया जा सकता है, जो कि धन सम्बन्धी प्रतिकर के संदाय के लिए एक प्रशासनिक कठोरता है जो मूल अधिकारों के घोर अतिलंघन में परिणत होती है, और नगरपालिका में विद्यमान किसी अन्य पद्धति से त्रुटिविहीन नहीं की जा सकती जिसे नगरपालिका अपना सके। प्रतिकर संबंधी अधिकार उन अभिकरणों के विधिविरुद्ध कार्यों के लिए किंचित उपशमन के रूप में हैं जो कि लोक हित के नाम से कृत्यशील होते हैं और जो रक्षा के रूप में राज्य की शक्तियों को उनके संरक्षण के लिए प्रस्तुत करता है। यदि इस देश में सभ्यता का विनाश नहीं हो जाना है, जैसा कि कुछ अन्य देशों में यह सुविदित रूप से हो चुका है, तो यह आवश्यक है कि हम अपने आपको यह स्वीकार करने के लिए सशक्त बनाएं कि व्यक्तियों के अधिकारों हेतु समादर गणतन्त्र का सही बुर्ज है। इसलिए, राज्य के लिए यह आवश्यक है कि पिटीशनर के अधिकारों को राज्य के अधिकारियों द्वारा जो नुकसान पहुंचाया गया है, उसका उपचार

किया जाए। यह उन अधिकारियों के विरुद्ध समाश्रय का रूप धारण कर सकता है। (पैरा 10)

बिहार राज्य द्वारा पिटीशनर को जो महान हानि पहुंचाई गई है उस पर विचार करते हुए अन्तरिम अभ्युपाय के रूप में राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह पिटीशनर को पहले से संदत्त 5,000 रुपए के अलावा 30,000 रुपए की अतिरिक्त राशि संदत्त करे। यह आदेश पिटीशनर को इस बात से प्रवारित नहीं करेगा कि वह राज्य से तथा उसके उन अधिकारियों से जिन्होंने गलती की है, समुचित नुकसानी का प्रत्युद्धरण करने हेतु वाद फाइल करे। (पैरा 11 और 12)

मूल अधिकारिता : 1982 का रिट पिटीशन (दाण्डिक) सं० 1387.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन पिटीशन।

पिटीशनर की ओर से	श्रीमती के० हिंगोरानी
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री डी० गोवर्धन

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति चन्द्रचूड़—

इस रिट पिटीशन से अधम तथा विक्षोभकारी कार्यवाही प्रकट होती है। हालांकि पिटीशनर को सेशन न्यायाधीश, मुजफ़रनगर, बिहार ने 3 जून, 1968 को दोषमुक्त कर दिया था, उसे 14 वर्ष से भी अधिक बाद, अर्थात् 16 अक्तूबर, 1982 को कारागार से रिहा किया गया। इस बन्दी-प्रत्यक्षीकरण पिटीशन द्वारा पिटीशनर ने इस आधार पर अपनी रिहाई की मांग की है कि कारागार में उसका निरोध अवैध है। उसने साथ-ही-साथ कतिपय आनुषंगिक अनुतोषों की मांग की है जैसे कि पुनर्वास, उसे खर्च की प्रतिपूर्ति जो कि उसने डाक्टरी इलाज पर खर्च किया है। उसने अवैध कैद के के लिए कतिपय प्रतिकर की भी मांग की है।

2. यह पिटीशन 22 नवम्बर, 1982 को हमारे समक्ष आया था जब कि हमें बिहार राज्य के काउन्सेल श्री गोवर्धन द्वारा यह सूचित किया गया था कि पिटीशनर को पहले ही कारागार से रिहा किया जा चुका है। इस प्रकार, पिटीशनर ने अपनी रिहाई के लिए जिस अनुतोष की मांग की थी वह निष्फल हो गया था किन्तु इसके बावजूद, हमने यह निदेश दिया कि पिटीशनर की प्रार्थना सं० 2, 3 और 4 की बाबत बिहार राज्य के नाम

वाद-हेतुक की सूचना जारी की जाए। प्रार्थना सं० 2 द्वारा पिटीशनर ने सरकारी खर्च पर डाक्टरी इलाज की मांग की। प्रार्थना सं० 3 द्वारा उसने अपने पुनर्वास के लिए अनुग्रहपूर्वक संदाय की मांग की थी, जब कि प्रार्थना सं० 4 द्वारा उसने 14 वर्ष से भी अधिक समय पर्यन्त कारावास में अपने अवैध निरोध के लिए प्रतिकर हेतु मांग की थी।

3. हमारी यह प्रत्याशा थी कि कम-से-कम इस विलम्बपूर्ण प्रक्रम पर भी बिहार राज्य उसे जारी की गई हेतु दर्शित करने की सूचना का तुरन्त उत्तर देगा, किन्तु राज्य ने चार मास से भी अधिक तक कोई स्पष्टीकरण नहीं पेश किया। रिट पिटीशन को हमारे समक्ष 31 मार्च, 1983 को उस समय सूचीबद्ध किया गया जब श्री गोवर्धन ने यह पुनः कथन किया कि पिटीशनर को पहले ही कारागार से रिहा किया जा चुका है। हमने उसी तारीख को इस आशय का एक विनिर्दिष्ट आदेश पारित किया कि पिटीशनर की रिहाई मामले को समाप्त नहीं कर देती और हमने बिहार राज्य से यह अपेक्षा की, कि वह एक लिखित स्पष्टीकरण प्रस्तुत करे जिसमें शपथपत्र के रूप में ये आधार दिए गए हों कि भला पिटीशनर को उसकी दोषमुक्ति के पश्चात 14 वर्ष से भी अधिक समय तक कारागार में क्यों रखा गया था। 16 अप्रैल, 1983 को श्री अलख देव सिंह, जेलर, मुजफ्फरपुर, केन्द्रीय कारागार ने उस आदेश के अनुसरण में एक शपथपत्र फाइल किया। औपचारिक परिवर्णनों से विहीन यह शपथपत्र इस प्रकार है—

> "2. कि पिटीशनर को 25 मार्च, 1967 को हजारी बाग केन्द्रीय कारागार से लाया गया था और उसे नियमित रूप से अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष पेश किया जा रहा था और 30 अगस्त, 1968 को विद्वान न्यायाधीश ने निम्नलिखित आदेश पारित किया था—
>
> > "अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाता है, किन्तु उसे राज्य सरकार तथा महानिरीक्षक (बन्दीगृह), बिहार द्वारा, आगे आदेश होने तक, कारागार में निरुद्ध रखा जाना चाहिए ;"
>
> (उक्त आदेश की सत्य प्रतिलिपि उपाबंध 1 के रूप में संलग्न है)
>
> 3. कि अभियुक्त रुदुल साह उपर्युक्त आदेश के पारित किए जाने के समय विकृत-चित्त था। यह जानकारी जिला मजिस्ट्रेट,

मुजफरनगर की मार्फत अधीक्षक, केन्द्रीय कारागार, मुजफरनगर के तारीख 10-5-1974 वाले पत्र सं० 1838 में विधि विभाग को भेज दी गई थी।

4. कि मुख्य चिकित्सक, मुजफरनगर ने 18 फरवरी, 1977 को यह रिपोर्ट दी कि अभियुक्त रुदुल साह स्वस्थ-चित्त है और यह जानकारी 21 फरवरी, 1977 को विधि विभाग को संसूचित कर कर दी गई थी।

5. कि पिटीशनर रुदुल साह के साथ कारागार मैनुअल बिहार के प्रति उसकी निरोध कालावधि के दौरान नियमों के अनुकूल अच्छा बर्ताव किया गया था।

6. कि पिटीशनर को विधि विभाग के तारीख 14-10-82 के पत्र सं० 11637 का पालन करते हुए 16 अक्तूबर, 1982 को रिहा कर दिया गया था।"

4. 26 अप्रैल, 1983 को रिट पिटीशन हमारे समक्ष सुनवाई के लिए आया जब कि हमने उसे अगस्त, 1983 के प्रथम सप्ताह पर्यन्त मुल्तवी कर दिया क्योंकि यह बात न तो जेलर द्वारा फाइल किए गए उस आदेश द्वारा, जो कि शपथपत्र के उपाबंध के साथ संलग्न है, स्पष्ट थी कि शपथपत्र में इस कथन का क्या आधार था कि पिटीशनर विकृत-चित्त था अथवा इस बात का कारण क्या था कि भला विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने राज्य सरकार तथा महानिरीक्षक (बन्दी गृह) द्वारा आगे आदेश दिए जाने पर्यन्त कारागार में पिटीशनर के निरोध के संबंध में निदेश दिया था।

5. अब यह रिट पिटीशन हमारे समक्ष आज पुनः सुनवाई के लिए पेश किया गया है। यदि भूतपूर्व अनुभव कोई मार्गदर्शन प्रदान करता है, तो इस बात की कोई संभाव्यता नहीं है कि यह आशय रखते हुए पिटीशन को मुल्तवी करके उसकी तामील की जाए कि राज्य प्राधिकारी हमारे समक्ष पिटीशनर की दोषमुक्ति के पश्चात् कारागार में उसके निरोध को बनाए रखने का स्पष्टीकरण देने के लिए कोई समाधानप्रद सामग्री पेश करेंगे। इसमें इस बारे में आशंका है कि वर्तमान स्थिति को देखते हुए जिसमें कि हम यह अनुमान मात्र लगा सकते हैं कि क्या पिटीशनर को मात्र इस अनुग्रहपूर्वक कारणवश कारागार से रिहा नहीं किया गया था कि वह पागल था अथवा उसके निकट भविष्य में ठीक हो जाने की कोई संभाव्यता नहीं थी।

1983(8) eILR(PAT) SC 1

6. जेलर द्वारा प्रस्तुत किए गए शपथपत्र में कई त्रुटियां हैं। उसने बड़ी स्पष्टवादिता से इस बारे में वर्णन किया है कि कुख्यात क्या है, उदाहरणार्थ, यह कि पिटीशनर को उसकी दोषमुक्ति के पश्चात् भी कारागार से रिहा क्यों नहीं किया गया था और यह कि इसके बारे में यह प्रतिपादन किया गया था कि वह पागल था ? किन्तु इससे ऐसी कोई दत्त-सामग्री प्रकट नहीं होती जिसके आधार पर उसे पागल निर्णीत किया गया था और न ही ऐसे कोई विनिर्दिष्ट अध्युपाय दर्शित किए गए हैं जो कि उसके इस रोग का उपचार करने के लिए किए गए थे तथा इससे महत्वपूर्ण बात यह है कि भला उसके मानसिक असंतुलन को सही करने में 14 वर्ष क्योंकर लग गए। रोग के निदान के समर्थन में कोई डाक्टरी राय इस बारे में नहीं पेश की गई है कि वह पागल था और न ही कारागार के किसी अभिलेख में यह दर्शित करने के लिए कोई सामग्री प्रस्तुत की गई है कि उसके लिए किस प्रकार का उपचार विहित किया गया था और उस पर उस उपचार का प्रयोग किया गया था और ऐसा कितने समय के लिए किया गया था। तारीख 10 मई, 1974 वाला पत्र (सं० 1838) जो कि शपथपत्र के पैरा 3 के अनुसार केन्द्रीय कारागार, मुजफरनगर के अधीक्षक द्वारा विधि विभाग को भेजा गया था, हमारे समक्ष पेश नहीं किया गया है। यह दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं किया गया कि पिटीशनर उसकी दोषमुक्ति की तारीख को ही पागल पाया गया था और यदि वह उस समय पागल था जब कि उसे दोषसिद्ध ही किया जा सकता था जिसका सीधा-सा कारण यह है कि पागल व्यक्ति अपनी प्रतिरक्षा पेश नहीं कर सकता। दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन पागल व्यक्तियों के, उनके विचारण को लागू होने वाली प्रक्रिया के बारे में किंचित कानूनी अधिकार होते हैं। शपथ-पत्र के पैरा 4 के अनुसार; मुख्य चिकित्सक, मुजफरनगर ने 18 फरवरी, 1977 को यह रिपोर्ट दी कि पिटीशनर प्रसामान्य अवस्था में है और यह संसूचना 21 फरवरी; 1977 को विधि विभाग को भेज दी गई थी। ऐसी दशा में भला पिटीशनर को तत्पश्चात् साढ़े पांच वर्ष से भी अधिक समय बीत जाने पर रिहा क्यों नहीं किया गया था। 14 अक्तूबर, 1982 को बिहार सरकार के विधि विभाग द्वारा यह निदेश दिया गया कि पिटीशनर रिहा कर दिया जाना चाहिए। भला विधि विभाग न्याय के प्रति इतना असंवेदनशील क्यों बना रहा। हम यह विश्वास करना उचित समझते हैं कि पिटीशनर पागलपन का वृतांत बाद में सूझी हुई घटना है और उसे अत्यधिक बढ़ा-चढ़ा कर कहा गया है। यदि वह वस्तुतः पागल था तो कम-से-कम 'यह दर्शित करने के लिए कि

पागलपन के लिए उसका उपचार किया जा रहा है डाक्टरी चिकित्सा का थोड़ा-सा ढांचा तो पेश किया ही जा सकता था। ऐसी परिस्थितियों में हम इस बात के लिए आबद्ध हैं कि हम यह निष्कर्ष निकालें कि यदि पिटीशनर समय के किसी प्रक्रम पर पागल पाया गया था, निश्चित रूप से यह पागलपन कारागार में उसके विधिविरुद्ध निरोध के परिणामस्वरूप उद्भूत हुआ होगा। निःसहाय होने की अवस्था तथा कुंठा की भावना विषाद की प्रवृत्ति रखते हैं और निरन्तर विषाद के परिणामस्वरूप एक प्रकार का मानसिक असंतुलन उद्भूत हो जाता है।

7. सरकार का सम्बद्ध विभाग इस न्यायालय के प्रति किंचित अधिक शिष्टाचार दर्शित कर सकता था और इस मामले के विद्यमान निष्ठुरता को स्पष्ट करने हेतु शपथ-पत्र फाइल करने के लिए अपने वरिष्ठ अधिकारियों में से किसी एक से शपथ-पत्र फाइल करने की मांग करके अपने उत्तरदायित्व के बारे में अधिक जागरूकता प्रदर्शित कर सकता था। दूसरी ओर जेलर को बलि का बकरा बनाया गया है और उसने प्रतिनिहित रूप से उच्च अधिकारियों की ओर से कर्तव्यच्युति दर्शित की है और यह कहा गया है कि उन्हें बेहतर जानकारी होनी चाहिए थी। यह मामला अपने ढंग का कोई अकेला मामला नहीं है और हम इससे अपने आप को समबद्ध महसूस करते हैं कि बिहार राज्य के कारागार प्रशासन से सभी ओर बन्दीगृहों में प्रशासन सम्बन्धी अन्धकार छाया हुआ है। भागलपुर में जो कैदियों को अन्धा बनाया गया था, उससे राज्य के कारागार प्रशासन की आंखें खुल जानी चाहिएं थीं। किन्तु उस अनोखे वृत्तांत से कोई सबक नहीं मिला है और इस गन्दे अस्तबल में उस मामले में कोई प्रतिक्रिया देखने में नहीं आई है। संभवतः हमें किसी ऐसे हर्क्युलीज की खोज करनी होगी जो कि दो नदियों को (जो कि पवित्र गंगा से भिन्न हों) उनमें से बहाकर उन दोनों गन्दे अस्बतलों को पूर्णतः साफ करेगा। हम ऐसा करते हैं (और प्रार्थना भी) कि राज्य के उच्चतर पदाधिकारी इस बात के लिए समय निकालेंगे कि वे राज्य में कारागार सम्बन्धी प्रशासन के विध्वंस ढंग के प्रति अपना ध्यान आकृष्ट करें और उस गम्भीर अन्याय को दूर करें जो कि निःसहाय व्यक्तियों के प्रति किया जा रहा है। उच्च न्यायालय को चाहिए कि वह स्वयं घटना की इस मामले की जांच करे और राज्य के कारागार में विधिविरुद्ध निरोध के प्रश्न पर बिहार की सरकार के गृह विभाग से सांख्यिकीय कारागृह से तालिका के रूप में विवरण की मांग की जानी चाहिए जिससे कि यह प्रकट हो सके कि भला कितने दोषसिद्ध व्यक्ति 10 वर्ष;

1983(8) eILR(PAT) S

12 वर्ष, 14 वर्ष तथा 16 वर्ष से अधिक समय से कारागार में पड़े हुए हैं। ऐसी अवस्था में उच्च न्यायालय उस स्थिति पर पहुंच सकेगा कि वह उन बन्दियों को रिहा कर सके जो कि कारागृहों में विधिविरुद्ध निरोध में पड़े हुए हैं तथा राज्य सरकार से यह मांग कर सके कि वे, जहां कहीं आवश्यक पर्याप्त प्रतिकर का संदाय करके उनके पुनर्वास के लिए कदम उठा सकें।

8. इससे हम इस प्रश्न पर पहुंचते हैं कि पिटीशनर पर जो गम्भीर अन्याय किया गया है, उस त्रुटि को भला कैसे दूर किया जा सकता है जहां कि वह संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन हमारी रिट अधिकारिता के प्रयोग में कार्यान्वित करने हेतु हमारी शक्ति के अन्तर्गत निहित है। उक्त अनुच्छेद उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी भी अधिकारी को प्रवर्तित करने के लिए यथास्थिति बन्दी-प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, निषेध, अधिकार पृच्छा, उत्प्रेषण अथवा निदेशों या आदेशों को जारी कर सकता है। भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों के प्रवर्तन के लिए समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय को समावेदित करने का अधिकार गारण्टीकृत है, अर्थात् संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी भी अधिकार को प्रवर्तित करने के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय को समावेदित करने सम्बन्धी अधिकार अपने आप में मूल अधिकार है।

9. यह सही है कि अनुच्छेद 32 का उपयोग ऐसे अधिकारों व बाध्यताओं को प्रवर्तित करने हेतु प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता जिन्हें न्यायालयों की सामान्य आदेशिकाओं, चाहे वे सिविल हों यह दाण्डिक की मार्फत प्रभावी रूप से लागू किया जा सकता है। इसलिए, धन संबंधी किसी दावे पर बहस की जा सकती है और उसे किसी ऐसे वाद में न्यायनिर्णीत किया जा सकता है जो कि उसका विचारण करने के लिए सक्षम न्यूनतम दर्जे के न्यायालय में संस्थित किया गया हो। किन्तु हमारे विचारार्थ मुख्य प्रश्न यह है कि क्या अनुच्छेद 32 के अधीन उसकी अधिकारिता के प्रयोग में यह न्यायालय ऐसी दशा में धन के संदाय के लिए आदेश पारित कर सकती है जिसमें कि ऐसा आदेश किसी मूल अधिकार के प्रवंचन के परिणामस्वरूप प्रतिकर की प्रकृति में हो। प्रस्तुत मामला ऐसे मामलों का एक दृष्टांतस्वरूप है। यहां पिटीशनर को, अवैध रूप से, एक पूर्ण विचारण में उसकी दोषमुक्ति के पश्चात् 14 वर्ष का समय बीत जाने के बाद भी कारागार में अवैध रूप से निरुद्ध रखा गया था। उसने इस न्यायालय में अवैध निरोध से अपनी रिहाई के लिए बन्दी-प्रत्यक्षीकरण

1983(8) eILR(PAT) SC 1

नामक पिटीशन फाइल किया। उसे वह अनुतोष अभिप्राप्त हो गया क्योंकि हमारा यह निष्कर्ष था कि उसकी दोषमुक्ति के पश्चात् कारागार में उसका निरोध सर्वथा अन्यायोचित था। उसने यह दलील दी है कि वह अपने अवैध निरोध के लिए प्रतिकर प्राप्त करने का हकदार है और हमें चाहिए कि हम स्वयं इस बन्दी प्रत्यक्षीकरण पिटीशन में प्रतिकर के संदाय के लिए समुचित आदेश पारित करें।

10. हम इस दलील को नजरअन्दाज नहीं कर सकते। हमें इस आक्षेप के सिवाय इसका कोई प्रभावशील उत्तर दिखाई नहीं देता जो कि घिसा-पिटा और निरर्थक मात्र है, अर्थात् यह कि पिटीशनर को यह परामर्श दिया जाए कि वह राज्य सरकार से नुकसानी का प्रत्युद्धरण ग्रहण करने के लिए वाद फाइल करे। सौभाग्य से, राज्य के काउन्सेल ने यह आक्षेप नहीं उठाया है कि पिटीशनर को ऐसी दशा में वाद के साधारण उपचार को प्राप्त करने के लिए बाध्य किया जा सकता था यदि उसका दावा संविदात्मक होता अर्थात् ऐसा होता कि किसी सिविल न्यायालय द्वारा उसके दावे को कायम रखा जाता या न रखा जाता। किन्तु उसमें इस बारे में कोई सन्देह नहीं है कि यदि पिटीशनर अपने अवैध निरोध के लिए नुकसानी का प्रत्युद्धरण करने हेतु वाद फाइल करता है तो उस वाद में निश्चित रूप से नुकसानी की क्षतिपूर्ति के लिए डिक्री पारित करने को कहा, हालांकि साक्ष्य के अभाव में यह तथ्य संलग्न करना संभव नहीं है कि वह सुनिश्चित रकम का होगा जो कि उसके पक्ष में डिक्री की जाएगी। ऐसी परिस्थितियों में, पिटीशनर के पक्ष में प्रतिकर संबंधी आदेश पारित करने हेतु इस न्यायालय का प्रत्याख्यान उसकी स्वाधीनता के मूल अधिकार के संबंध में दिखावा मात्र होगा जिसका उल्लंघन राज्य सरकार द्वारा गंभीर रूप से किया गया है। अनुच्छेद 21 जो कि जीवन तथा स्वाधीनता के अधिकार की गारण्टी प्रदान करता है, ऐसी दशा में अपनी महत्वपूर्ण अन्तर्विष्टि से विहीन हो जाएगा जिसमें कि इस न्यायालय की शक्ति के अवैध निरोध से रिहाई के आदेश पारित करने मात्र तक सीमित हो। उन प्रभावशील उपायों में से जिनमें कि उस अधिकार के उल्लंघन को युक्तियुक्त रूप से और अनुच्छेद 21 के समादेश के सम्यक् पालन को निवारित किया जा सकता है जो कि धन सम्बन्धी प्रतिकर के संदाय की एक प्रशासनिक कठोरता जो कि मूल अधिकारों के घोर अतिलंघन में परिणत होती है, नगरपालिका में विद्यमान किसी अन्य पद्धति से त्रुटिविहीन नहीं की जा सकती जिसे नगरपालिका अपना सके। प्रतिकर संबंधी अधिकार उन अभिकरणों के विधिविरुद्ध कार्यों के

1983(8) eILR(PAT) SC 1

लिए किंचित उपशमन के रूप में है जो कि लोक हित के नाम से कृत्यशील होते हैं और जो रक्षा के रूप में राज्य की शक्तियों को उनके संरक्षण के लिए प्रस्तुत करता है। यदि इस देश में सभ्यता का विनाश नहीं हो जाना है, जैसे कि कुछ अन्य देशों में यह सुविदित रूप से हो चुका है, तो यह आवश्यक है कि हम अपने आप को यह स्वीकार करने के लिए सशक्त बनाएं कि व्यक्तियों के अधिकारों हेतु समादर गणतंत्र का सही बुर्ज है। इसलिए राज्य के लिए यह आवश्यक है कि पिटीशर के अधिकारों को राज्य के अधिकारियों द्वारा जो नुकसान पहुंचाया गया है, उसका उपचार किया जाए। यह उन अधिकारियों के विरुद्ध समाश्रय का रूप धारण कर सकता है।

11. बिहार राज्य द्वारा पिटीशनर को जो महान हानि पहुंचाई गई है उस पर विचार करते हुए हमारी यह राय है कि अन्तरिम अभ्युपाय के रूप में राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह पिटीशनर को पहले से संदत्त 5,000 रुपये (पांच हजार रुपये) के अलावा 30,000 रुपये (तीस हजार रुपये) की अतिरिक्त राशि संदत्त करे। इस रकम का संदाय आज से लेकर दो सप्ताह के भीतर किया जाएगा। बिहार सरकार इस बारे में सहमत है कि वह ऐसा संदाय करेगी। हालांकि, हम इस बात को स्पष्ट कर दें कि हमारा यह आदेश उनकी सहमति पर निर्भर नहीं करता।

12. यह आदेश पिटीशनर को इस बात से प्रवारित नहीं करेगा कि वह राज्य से तथा उसके उन अधिकारियों से जिन्होंने गलती की है, समुचित नुकसानी का प्रत्युद्धरण करने हेतु वाद फाइल करे। जैसा कि हमने ऊपर कहा है, हमारे द्वारा जो प्रतिकर सम्बन्धी आदेश पारित किया गया है वह उपशमन की प्रकृति का है। हम पिटीशनर को तब तक अकिंचन नहीं छोड़ सकते जब तक कि उसका वाद, अनेक अपीलें तथा कार्यवाहियों का निष्पादन समाप्त नहीं हो जाता। तथ्य तथा विधि संबंधी सक्षम मुद्दों पर पूर्णरूपेण विचार-विमर्श, जो कि प्रतिकर सम्बन्धी वादों में मंद मंथर गति से चला करता है, उसे निर्धन रुदुल साह द्वारा ऐसा वाद फाइल किए जाने की प्रतीक्षा करनी होगी। तिमंगल (शक्तिमान व्यक्ति) को इस बात की स्वाधीनता होगी कि वह इस वाद में उन मुद्दों को उठाए। हम आशा करते हैं कि ऐसे समय तक बिहार राज्य में अथवा अन्यत्र रुदुल साह जैसे अन्य व्यक्तियों पहुंची स्थिति का लोप हो जाएगा।

रिट पिटीशन मंजूर किया गया।

भू०